

तू करे जिनको याद

घने ने सोचा—“ भला परदेसियों से कैसा मोह ? मैंने तो केवल उन्हें पकौड़े तलकर खिलवाये। टिकियां, समोसे बनाकर दिये। विवाह करने आये थे, विवाह कर के वापस अपने देश चले गये। धर्मशाला वही है, मैं वही हूं। मैं नाहक बीती हुई बातों को याद कर रहा हूं।”

परन्तु बीती हुई बातों को कोई स्वयं थोड़े ही याद करता है ? अपने आप मन कहता है:

परदेसी चले गये, मढियां ये मारें,

जिंदा कर मारें, उनकी सब बातें अभी

...बरसों बीत गये। घना हैदराबाद (सिंध) में दीनू के आंगन के सामने वाले मैदान में बाहर खटिया बिछाकर सोया हुआ था। घना कमल डंडी की सब्जी के शोरबे में डबल रोटी देना...घना, एक आने के मिर्ची के पकौड़े देना, घना पहले मुझे दो न पकौड़े कितनी देर से खड़ी हूं...।

“छोरी, हाथ तो नीचे कर। कहीं खोमचा मत गिरा देना।” घने ने करवट बदली तो उसे खटिया की नारियल की रस्सी चुभने लगी। अपनी बंद आंखों के भीतर उस खानदानी सहमी हुई लड़की का चेहरा याद करके घने ने नारियल की रस्सी को, सीने और पसलियों में खूब जोर से चुभने दिया।

गमछे को खींचकर घने ने बालों से भरे सीने का पसीना पोंछ लिया था। उसने एक आंख खोलकर चारों ओर के वायुमंडल का जायजा लिया। चूना पोतने वाला कच्छी थोड़ी दूर पड़ी खटिया पर उठकर बैठा था। उसके पास वाली खटिया पर कांच के टुकड़े लगी लाल अंगिया और काली किनारी वाली हुरिमिचो (कढ़ाई का एक प्रकार) की हुई चुनरी पहनने वाली चम्पा भी उठकर बैठी थी। दूसरे दिन ये दोनों अपने देश कच्छ की ओर जाने वाले थे। उन्होंने घने को भी साथ चलने के लिये कहा था। परन्तु घने ने कहा था, “आप तो कच्छी हैं, अपने कच्छ चले जाओगे। हमारा कौनसा सिंघ है, जहां जायेंगे ?” कच्छी ने कहा, “घुटन बहुत है।” घने ने नारियल की रस्सी को बांह के मांस से रगड़ते हुए कहा था, “तो क्या सावन वैसे ही मौज मचायेगा ?”

सड़क पर आवागमन धीरे-धीरे बढ़ने लगा था और घना अपने नंगे सीने पर जनेऊ को ठीक करते हुए उठ बैठा था। उसकी जमुहा आधे में ही रुक गई। जनेऊ

संस्कार के समय का दृश्य उसकी आंखों के सामने सजीव हो उठा। बड़े भाई का विवाह हुआ था रात के समय और जनेऊ संस्कार सबेरे पूर्ण हुआ था। घने ने घूंघट से ढके चेहरे वाली वधू के दूध जैसे सफेद पैर और मेंहदी लगे सुंदर हाथ देखे तो मन में कहा, "मैं भी बड़ा होकर भाभी जैसी सुंदर लड़की से विवाह रचाऊंगा। भला जेकबाबाद में सौंदर्य की कहां कमी है?"

परन्तु आषाढ की गर्मी वाली इस चांदनी रात में छत पर पड़ी खटिया पर सोया घना नींद से जाग गया था। उसे नीचे जाना था, सो जैसे ही छोटी छत से उतर कर सीढ़ी की ओर जाने लगा, वैसे ही उसकी नजर एक सुंदर स्त्री पर जा पड़ी। वह चांद द्वारा उंडेली जा रही चांदनी में बेखबर सोई हुई थी। लाल रिबन का फूल उसके कान के पास चमक रहा था। बंदी मानो उसके चमकते ललाट को खा रही थी। सोने का गहना सफेद गले पर पड़ा जैसे अपना आलस्य दूर कर रहा था और अमृत की धारा थी, जो उसकी छाती से, पास में सोया बच्चा पी रहा था। घने ने चोर निगाहों से चारों ओर देखा। कोई नहीं जाग रहा था। घना कुछ देर तक खड़ा रहा। राजा के खजाने से चोरी करने वाले कोतवाल की भांति पसीने से नहाया हुआ। कोई उसके सीने में स्वीकृति दे रहा था, "यह खजाना राजा का है जो कराची से दुकान के लिये सामान लाने के लिये गया है। तुम कोतवाल हो। तुम रक्षक हो, चोर नहीं। परन्तु चोरी मैं कर ही कहां रहा हूं? खजाना, जिसका मैं रक्षक हूं, क्या उसे जी भर कर देखने का भी अधिकार नहीं है मुझे?"

"नहीं घना, नहीं। केवल रखवाली करना तेरा कर्तव्य है।" और घने ने अपनी खटिया से चद्दर लेकर भाभी को ढंक दिया।

अगली सुबह चाची, वधू को सता रही थी, "तो यह चद्दर तेरे पास उड़ कर आयेगी क्या?, मैं आज ही तेरे पति को कराची संदेश भेज कर बता देती हूं कि मैं तेरी इस कमीनी बहू को संभाल नहीं पाऊंगी।"

घने की बांहों में से किसी ने शक्ति निकाल ली। दोपहर को जब शांति हुई तो घने ने पानी के घड़ों के पास बहू से कुल्ले के लिये पानी का लोटा लेते हुए कहा, "भाभी, रात को चद्दर मैंने डाली थी तेरे ऊपर। मुझे दुख हो रहा है। चाची ने तुझ पर बहुत गुस्सा किया है।" बहू ने बेजुबान समझदार गाय की भांति घूंघट वाला सिर दो बार हिलाया।

परन्तु सांझ होते ही बात ने बड़ा मोड़ ले लिया। चाची ने बहू की मां को बुलवा लिया। बहू अपने छोटे बेटे को चाची के चरणों में रख कर हाथ जोड़ रही थी। जोर जोर से सिसकियां भर कर रो रही थी। ऊपर रोशनदान की खिड़की में से यह सब घने ने देखा और उसे डर ने घेर लिया। वह उसी चद्दर को लपेट कर, बगल में दबाकर दो चार नोट जेब में रखकर, हैदराबाद (सिंध) का टिकट लेकर रेलगाड़ी में जा बैठा। हैदराबाद में

स्टेशन के पास, जिस दुकान से उसने भजिये और डबल रोटी लेकर खाये, वहीं उसे काम मिल गया।

भजिये बनाना, तल कर खोमचे में डालना, मुस्कराते हुए ग्राहकों को देना, सब धीरे धीरे उसके जिम्मे हो गया। घना, कमल डंडी की सब्जी का शोरबा और डबल रोटी बेचने लगा तो दुकान वाले कोडूमल की प्रसिद्धि बढ़ गई। घने ने अपना नाम “घनश्याम” से बदल कर “घना” तो किया था, परन्तु घना शब्द से उसे इतना अपनत्व हो गया था कि कहता, भजिये मैं बनाऊं और प्रसिद्धि हो कोडू की। किसी तरह स्टेशन से दूर दीनू के आंगन के सामने वाले मैदान में घने को एक जगह किराये पर मिल गई और घना, कोडू की दुकान से इस प्रकार गायब हो गया, जिस प्रकार जेकबाबाद से गायब हुआ था।

घने ने उस जगह को दुकान बनाने में कड़ी मेहनत की। वहां घने के भजियों तथा कमल डंडी की सब्जी के शोरबे के साथ वाली डबल रोटी की प्रसिद्धि इतनी फैल गई कि दूर दूर से लोग बच्चों को घने की दुकान पर भेजने लगे। जब हर कोई “घना, शोरबे वाली डबल रोटी दे...घना, पकौड़े दे... घना, छोले दे” कहता... तब घने को अपना अस्तित्व किसी खानदानी घर के दूल्हे की मां जितना विशाल महसूस होता था। परन्तु जब घने ने देखा कि देश के विभाजन के बाद उसका नाम पुकारने वाले देशांतर करते जा रहे हैं, तब उसका दिल डर गया, “अब मैं किसी काम का नहीं हूं?” उसने एक चूना पोतने वाले कच्छी को, उसकी पत्नी सहित अपने साथ ठहराया। परन्तु वे भी कुछ दिनों के बाद अपने देश चले गये। घना अकेला हो गया। अब वह अंदर से कुंडी लगाकर सोने लगा। पड़ौस के चार भले मुसलमानों ने उससे कहा था, “घना, तेरे लिये हमारी जान भी हाजिर है, परन्तु बुरे लोग भी तो इस संसार में हैं।”

घने को अब चाची की याद आई। भाभी याद आई। परन्तु जेकबाबाद स्टेशन तक पहुंचते पहुंचते ही उसे पूर्व बोध हो गया कि वह जिन्हें कभी स्वयं छोड़ कर आया था, वे आज उसे छोड़ कर चले गये थे। घर जाकर उसने परायों को वहां देखा तो उसकी हिम्मत टूट गई। उसने पड़ौस वालों से जांच पड़ताल की तो पता चला कि चाची वर्षों से उसको ढूंढने के लिये जी जान लगा चुकी थी। तब घना रो दिया।

घना रात के समय तुर्की टोपी सिर पर रखकर, स्टेशन की ओर रवाना हो गया। कुत्तों का हू हू कर चिल्लाना उसे पहले कभी इतना बुरा नहीं लगा था, जितना उस समय जेकबाबाद स्टेशन को छोड़ते समय लगा था।

भारत में अकेले घने के लिये बसना कोई कठिन बात नहीं थी। वह इतने बड़े भारत के एक छोटे नगर में ही सही, भजियों का खोमचा लगाता था। धीरे-धीरे उसका धंधा बढ़ता गया, परन्तु “भजिये दो, बड़ा पाव दो” सुन सुनकर घने को वह मजा नहीं मिल पा रहा था, जो हैदराबाद के “घना, पकौड़े दे...घना, शोरबे की डबल रोटी दे...से

आता था। उसकी आत्मा दिन रात दूर दूर कहीं भटकने चली जाती थी। अकेले अकेले अपने को लकड़ी की दुकान के भीतर फेंकते समय उसकी आत्मा जेकबाबाद को छोड़ते समय कुत्तों के हू हू कर चिल्लाने की भांति चीखने लगती थी।

एक बार एक सिंधी ने आकर उससे पूछा, “घना, धर्मशाला में विवाह का कार्यक्रम है। खाना पकाने का काम करोगे?” घने ने पहले तो पैसों पर बखेड़ा किया। परन्तु बाद में यह सोचकर कि सिंधियों का विवाह कार्यक्रम है, हो सकता है कहीं जेकबाबाद वालों का कोई पता चल जाये, वह बात मान गया। लेकिन माला के टूटे मनकों का मेल मुश्किल से ही हो पाता है...बाद में घने को यह काम इतना पसंद आ गया कि अब वह धर्मशाला में विवाह के लिये आये सिंधियों को देखता भर था तो उनके पास दौड़ा चला जाता था। उनके सामने हाथ जोड़ कर खड़ा हो जाता था। उनसे कहता था, “भैया, खाना पकाने वाले का काम मुझे देना। आपका सिंधी भाई हूँ।”

विवाह वाले, पैसे तय करने में बहुत मौल भाव करते थे, परन्तु घना अब खुशी खुशी हानि सहन कर मान जाता था। दिहाड़ी के पैसे तो घने के लिये मूल राशि के समान थे, परन्तु ब्याज में उसे जो विवाह की चहल पहल, सिंधी विवाह गीत, नृत्य, फूलों की महक और सिंधियों से बातचीत करने का सुख मिलता था, वही उसे सबसे मधुर लगता था। वह अपनी आत्मा में उगे फोड़े पर पपड़ी जमती हुई महसूस करता था।

लेकिन विवाह के पश्चात् जब सिंधी लोग वापस जाते थे, तब घना मानो दर्द से कराहते पशु की भांति किसी कोने में जाकर कू कू करता था। जाने वाले चले जाते हैं, परन्तु आंगन में कोयलों की राख, फूलों के खाली टोकरे और पत्तलों के ढेर घने को देशांतर का समय बार बार याद दिलाते रहते हैं। बार बार रिश्तेदारों को देखने की तड़प उसके दिल के अंदर जोर जोर से उभर आती है। वर्षों बाद भी उसकी उम्मीद, राख में छिपे अंगारे की भांति अंदर ही अंदर जलती रहती है। हर बार, धर्मशाला खाली होते समय घने की आत्मा जेकबाबाद को छोड़ने वाली रात वाले कुत्तों की हू हू कर चिल्लाने की आवाज सुनती रहती है। वह मनहूस आवाज, उसे अर्द्ध रात्रि तक नींद करने नहीं देती है। घना सोचता रहता है...और कुछ कुछ याद करता रहता है।

अनुवादक : खीमन यू. मूलाणी

